जगद्गुरुश्रीसुखानन्दाचार्यविरचित

शिक्षाबत्तीसी

बन्दि परात्पर ब्रह्म श्रीसीतापति रघुराज।

वन्दौं रामानन्दगुरु भाष्यकार यतिराज।।1।।

प्रातकाल उठि सुमिरिये सीताराम कृपाल।

जासु नाम कीर्त्तन करे जनहिं न व्यापै काल।।2।।

श्रीभगवन्मन्दिर तथा देखत सन्त-समाज।

वन्दन करिये प्रेम से जगद्वन्द्य यह काज।।3।।

सद्गुरु औ भगवान् कहं नमन करत यदि कोय।

निसरत जो तेहि बीच से सो अपराधी होय।।4।।

आवत देखै सन्तजन तो नमि लावै धाय।

जात समय पुनि नमन करि पहुँचावन कहँ जाय।।5।।

इन्द्रियगण कहँ जीत करि नित्य करहु सत्संग।

करहु रामपदपद्मरति छाँड़हु दुर्जुन संग।।6।।

करि रघुवर गुणगान कहँ तजिये निजगुणगान।

मानि विषयगण विष सदृश करहु सन्त-सन्मान।।7।।

श्री भगवत् भागवत के जो जन गावैं नाम।

सुखी होउ तिनको निरखि सेवहु आठो याम।।8।।

भक्त जनहिं नमि भक्ति से जन चारहु फल साध।

किये नमन हूँ ना नमे होत महा अपराध।।9।।

करहु न हरि हरिभक्तकी निन्दा करि अपचार।

निन्दे हरि हरिभक्त के यमपुर पावत मार।।10।।

करे सन्त भगवान् के चरणामृत का पान।

मनुज बड़ाई मान तजि पावै पद निर्बाण।।11।।

ब्रह्मरामरत ज्ञानयुत करि वैष्णव गुरु सन्त।

सर्वोत्तम सायुज्य सुख भौगै जीव अनन्त।।12।।

त्रय रहस्य औ तत्त्वत्रय के ज्ञाता जो सन्त।

गुरु बनाय तिनको करै कर्मभोगका अन्त।।13।।

ज्ञान भक्ति तप निष्ठ जो सेवैं राम खरारि।

बरबस तिनको सेइ निज सर्वस लेहु सुधारि।।14।।

भक्त तथा भगवान् में राखै बुद्धि समान।
मोर भक्त मोसे बडे मानत श्री भगवान्।।15।।
भक्ति विरोधी बुद्धि जो होवै कबहुँ अजान।
तो रघुवर पद जलज जल करहु प्रेम से पान।।16।।
बनहु ज्ञान वैराग्य रत तथा भक्तिसम्पन्न।
परत न पुनि भवसिन्धु महँ सीताराम-प्रपन्न।।17।।
वसन विभूषण औ सुखद खान पान सन्मान।
लेत न रामार्पण विना श्रीवैष्णव मतिमान्।।18।।
राजस तामस देव तजि पूजै सात्विक राम।
दुखकर पुनरागमनसे तो पावै विश्राम।।19।।
तजि जूठन औ भोग-मति ले गुरु राम-प्रसाद।
पावै ना तो कबहुं नर गर्भवास अवसाद।।20।।
लोलुप विषयन के बनहिं धरि शुचि वैष्णव भेष।
रक्षैं तिनके संग से श्रीरघुवर सर्वेश।।21।।
हरि गुरुजन निन्दननिरत जनका तजिये संग।
लेत देत सन्मान तेहि लागत तेहिका रंग।।22।।
पत्थर प्रभु मूरति गनै मानव गुरु निष्पाप।
तो लागै तेहि पाप अति सो भोगै त्रय ताप।।23।।
अच्युत अच्युत-भक्त की कबहुँ न पूछहु जात।
पूजनीय पावन परम वैष्णव-पदजलजात।।24।।
राम राम-जन चरण जल सम न कतहुँ जल आन।
मुक्तिलोक प्रापक बनत सेवित दिव्य विमान।।25।।
कतहुँ न सीतापति सदृश देव न कोऊ आन।
सकृत् शरण से मुक्ति दें जहँ प्रभु भोग समान।।26।।

हरि हरि–आश्रित सन्त की सेवा कहँ जो त्याग।
ताहि जरावै नित्य प्रति पाँच विषयकी आग॥27॥

हरि मन्दिर गण महँ लखहु इष्ट देव सियराम।
इष्ट ध्यान करि करिय परि दण्डसमान प्रणाम॥28॥

सन्त तथा भगवान् के गनिये नाम समान।
दोउ के कीर्त्तन के सदृश सुखद न पावन आन॥29॥

धर्महानि सम हानि नहिं धर्मवृद्धि सम वृद्धि।
असत् शास्त्र सम ठग नहीं जो नाशैं जन बुद्धि॥30॥

धर्म अहिंसा सम नहीं हिंसा सम नहिं पाप।
साधन भक्ति समान नहिं जो नाशै त्रय ताप॥31॥

मत न विशिष्टाद्वैत सम गति नहिं राम समान।
कीर्त्तनीय नहिं मोक्षकर रामनाम सम आन॥32॥

कण्ठी मुद्रा मन्त्र औ ऊर्ध्वपुण्ड्र शुभ नाम।
निज गुरु से लै भक्तजन भजैं सर्वपति राम॥33॥

रामानन्दयतीन्द्रकी ये शिक्षा बत्तीस।
सुखानन्दकृति हिय धरे सुखी करैं जगदीश॥34॥

*
**